प्रकाशकः—

श्रीहिन्दीजैनागमप्रकाशक सुमतिकार्यालय

जैन प्रेस

कोटा (राजपूताना)

प्रथमा वृत्तिः २५०

मुद्रकः—

जैन प्रेस,

कोटा.

भूमिका

विश्व के सभी सभ्य समाजों में अपने से अधिक गुणवान. विद्यावान्. वयोवृद्ध के प्रति आदर एवं भक्तिभाव रहा करता है, और उनकी अविद्यमानता में–तिरोहित हो जाने पर उनके स्मारक के रूप में मंदिर,मूर्त्ति–पादुका, चित्र आदि का निर्माण होता है जिससे शिल्प स्थापत्य मूर्तिकला चित्रकला का विकाश एवं उत्तरोत्तर अभिवृद्धि व उन्नति हुई, और उनके गुणानुवाद के रूप में चरित काव्यों, भक्ति साहित्य-स्तुति स्तोत्रादि विशाल साहित्य का निर्माण हुआ। कोइ भी वस्तु उत्पत्ति के समय साधारण रूप में होती है पर विशिष्ट व्यक्तियों के हाथों में जाकर कलापूर्ण एव असाधारण रूप में परिवर्त्तित हो जाती है। मदिर मूर्त्तियो के पीछे श्रीमानों एव कुशल कलाकारों के सहयोग से अरबों खरबों द्रव्य या असंख्य धनराशि का व्यय हुआ है। समय समय के राज्य विप्लव एवं प्राकृतिक प्रलयों से ध्वस्त होते होते जो सामग्री बच पाइ है या खुदाइ से प्राप्त हुई है, उससे उपर्युक्त कथन पूर्णरूपेण समर्थित है। इसी प्रकार असाधारण प्रतिभासपन्न विद्वानों के भक्तिसिक्त हृदयों से जो उद्‌गार निकले वे साहित्य की छटा से पूर्ण विविध छंद अलंकारों से सज्जित, शृंगार. दर्शन अध्यात्म से सराबोर. विविधशैली की असख्य उदात्त रचनाओं के रूप से आज भी सुरक्षित है।

स्तोत्र साहित्य की प्राचीनता एवं जैनेतर स्तोत्र

भारतीय साहित्य में सब से प्राचीन ग्रन्थ वेद माने जाते हैं, उनके अवलोकन से तत्कालीन लोक मानस के भक्तिभाव का झुकाव, इन्द्र वरुण

अग्नि, सूर्य आदि की स्तुति रूप ऋचाओं में पाया जाता है, परवर्ती साहित्य में क्रमशः बहुत से नवीन देवों की कल्पना बढ़ती गई और उनके स्तुति स्तोत्र विपुल परिमाण मे बनने लगे। रामायण महाभारत भागवतादि विशालकाय चरित ग्रन्थ भी इसी भक्तिवाद के विकाश की देन है। रघुवंश कुमारसभव किरातार्जुनीय शिशुपालवध आदि काव्य ग्रन्थों में भी प्रसंगवश कृष्ण महादेव चंडी आदि की स्तुति की गई है, पुराणों के जमाने में तान्त्रिक प्रभाव बढता चला. फलतः शिवकवच शिवरक्षा विष्णुपंजर आदि संज्ञक रचनायें उपलब्ध होती हैं। इसी प्रकार अष्टोतर शत सहस्र नामवाले स्तोत्रों का एव दुर्गासप्तशती चडी दुर्गा सरस्वती आदि के स्तव सैकडों की संख्या में उपलब्ध है. जिसमें शिवमहिम्न. चंडीशतक. सूर्यशतक देवीशतकादि एव शकराचार्य के स्तोत्र बहुत प्रसिद्ध * है। बौद्ध साहित्य में भी विद्वतापूर्ण अनेक स्तोत्रों की उपलब्धि होती है। इन सब स्तोत्रों का परिमाण विशाल होने पर भी जैन स्तोत्र साहित्य, भारतीय स्तोत्र साहित्य में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखता है। कइ दृष्टिकोण से उनका वैशिष्ट्य असाधारण प्रतीत होता है पर उस पर विस्तृत विवेचन करने का यह स्थान नहीं है।

जैन स्तोत्र साहित्य का विकाश

जैन धर्म मे उसके उद्धारक एवं प्रवर्त्तक तीर्थंकरों का आदर होना स्वाभाविक ही है। मूल आगमों मे वीरस्तुति अध्ययन एव अन्य ग्रन्थों में भी तीर्थंकरों की सुन्दर शब्दों में स्तुति की गई है. और देवों द्वारा १०८ पद्यों में स्तुति करने का निर्देश पाया जाता है। मौलिकरूपसे दि० समंतभद्र

*—विशेष जानने के लिये देखें, शिवप्रसाद भट्टाचार्य के 'प्राचीन भारत का स्तोत्र साहित्य' लेख के आधार से लिखित भक्तामर-कल्याणमंदिर-नमिऊण की प्रो० हीरालाल कापडिया लिखित प्रस्तावना एवं शोभनकृत स्तुति चतुर्विंशतिका की भूमिका।

एव श्वे में सिद्धसेन आद्य स्तुतिकार माने जाते हैं। समंतभद्र के देवागम स्तोत्र. स्वयंभूस्तोत्र एवं जिन शतक, और सिद्धसेन की द्वात्रिंशिकायें और कल्याणमंदिर बड़े ही गंभीर एवं भावपूर्ण स्तोत्र हैं। देवागम एवं द्वात्रिंशिकाओं में दर्शनशास्त्र कूट कूट के भरा है। इसके पश्चात् मानतुंगसूरि कृत भक्तामरस्तोत्र, शोभनमुनि रचित स्तुति चतुर्विंशतिका, धनपाल रचित ऋषभपंचाशिकादि ११ वीं शताब्दि तक सख्या में कम पर महत्वपूर्ण स्तोत्र निर्मित हुए। १२-१३ वीं शती से स्तोत्र साहित्य की सख्या में जोरों से अभिवृद्धि हुई, जो अब तक चालु है। लेख विस्तार के भय से यहा उनका विवेचन नहीं किया जा रहा है*। स्तुति स्तोत्र छोटे छोटे होने के कारण इनकी सग्रह प्रतियें लिखी जाने लगी पर फुटकर पत्रों की रक्षा की ओर उदासीनता रहने आदि के कारण हजारों स्तोत्र नष्ट हो चुके है, फिर भी हजारों की सख्या में उपलब्ध विशिष्ट स्तोत्रों से जैन स्तोत्र साहित्य का महत्व भली भाति जाना जा सकता है।

जैन स्तोत्रों का प्रकाशन

कुछ वर्ष हुए यशोविजय ग्रन्थमाला ने इसके प्रकाशन की ओर कुछ ध्यान दिया, और दो भागों में कई सुन्दर स्तोत्र प्रकाशित किये। श्रेयस्करमडल म्हेसाणा ने भी कुछ स्तोत्र प्रकाशित किये, पर सब से अधिक श्रेय मुनि चतुरविजयजी को है जिन्होंने 'जैन स्तोत्र सदोह' नामक वृहदाकार ग्रन्थ के २ भाग प्रकाशित किये एव अत में समस्त स्तोत्रों की सूची प्रकाशित की। आपने जैन पत्र में लेखमाला भी प्रकाशित की थी। स्तोत्रों को सटीक विस्तृत विवेचन सह प्रकाशन × करने का कार्य देवचन्द्र लालभाई पुस्तकोद्धार फंड की ओर से प्रो० हीरालाल कापडिया ने किया। भीमसी माणेक ने भी प्रकरण

---

*-विस्तार के लिये देखें, हीरालाल कापडिये की भक्तामरादि स्तोत्र त्रय की प्रस्तावना एवं शोभन चतुर्विंशतिका की भूमिका।

×-प्रकाशित ग्रन्थ-१-२-३ शोभन, बप्पभट्टि मेरुविजय रचित स्तुतिचतुर्विंशतिका, ४-धनपाल कृत ऋषभ पंचाशिका ५-भक्तामरादि

रत्नाकर मे वहुत से स्तोत्रों को प्रकाशित किया एवं अन्य फुटकर सग्रह ग्रन्थों में कई स्तोत्र प्रकाशित हुए, फिर भी स्तोत्र साहित्य ४ की विशालता को देखते हुए एसे प्रयत्न अभी और होते रहने आवश्यक है। मुनि-विनयसागरजी ने इस ओर ध्यान देकर एक आवश्यकता की पूर्त्ति करना प्रारम्भ किया है यह सराहनीय है।

खरतरगच्छीय स्तोत्र साहित्य

जैन स्तोत्र साहित्य की श्री वृद्धि करने में खरतरगच्छाचार्यों एवं विद्वानों की सेवा विशेष रूप से उल्लेखनीय है। १२ वीं शती से इसका प्रारंभ अभयदेवसूरिजी से होता है। देवभद्राचार्यजी के भी कई स्तोत्र प्रकाशित है पर जिनवल्लभसूरिजी एव जिनदत्तसूरिजी ही इस शती के उल्लेखनीय स्तोत्र रचयिता हैं। जिनवल्लभसूरिजी प्रकाड विद्वान थे, उनके विद्वतापूर्ण एवं विशाल स्तोत्रों से परवर्त्ती विद्वानों को काफी प्रेरणा मिली है। आपके अधिकांश स्तोत्र प्राकृत में है। २४ तीर्थंकरों के अलग २ स्तवन रूप चौवीसी एव पंचतीर्थी स्तव, ५ कल्याणक स्तवन सर्वप्रथम आपके ही उपलब्ध हैं। उल्लासि भावारिवारण दुरियर स्तोत्रादि आपके विशेष प्रसिद्ध हैं इन पर कई टीकायें भी प्राप्त हैं। जिनदत्तसूरिजी के स्तोत्र वडे चमत्कारी माने जाते हैं और समस्मरणादि

स्तोत्रत्रयम्, ६–७–भक्तामरपादपूर्ति काव्यसग्रह भा १–२। ८–जैन धर्म वर स्तोत्रादि

४–ऊपर केवल प्राकृत–सस्कृत स्तोत्रों की ही चर्चा की गई है। गुजराती राजस्थानी हिन्दी आदि में रचित स्तुति साहित्य बहुत ही विशाल है। साराभाई प्रकाशित स्तवन मंजूषा में ११५१ स्तवन और चौवीसी वीसी सग्रह आनन्दघन यशोविजय ज्ञानविमलसूरि देवचन्द्र आदि के स्तवन सग्रह में हजारों स्तवन प्रकाशित हैं, अप्रकाशित तो असख्य हैं। मराठी. बंगला पारशी सिन्धी भाषा में भी स्तवन पाये जाते हैं।

में ३ स्तोत्र तो नित्य पाठ किये जाते हैं। १३ वीं शती मे मणिधारी जिनचन्द्रसूरि जिनपतिसूरि पूर्णभद्र गणि जिनेश्वरसूरि (द्वि०) के स्तोत्र उपलब्ध हैं। १४ वीं शती के पूर्वार्द्ध में जिनरत्नसूरि उ० अभयतिलक. देवमूर्त्ति. जिनचन्द्रसूरि (तृ०) एव उत्तरार्द्ध में जिनकुशलसूरि जिनप्रभ-सूरि,तरुणप्रभसूरि उ लब्धिनिधान जिनपद्मसूरि राजशेखराचार्य आदि स्तोत्र-कार हुए, जिनमें जिनप्रभसूरि समस्त जैन स्तोत्रकारो में शिरोमणि हैं। कहा जाता है कि प्रतिदिन नूतन स्तोत्र बनाये बिना आप आहार ग्रहण नहीं करते थे फलत ७०० स्तोत्रों की रचना हो गई, पर अभी तो आपके ७०स्तोत्र ही उपलब्ध है। आपके रचित स्तोत्र यमक श्लेष चित्र छंदादि विविध विशेषताओं से परिपूर्ण हैं। १५ वीं शताब्दि में जिनलब्धिसूरि लोकहिताचार्य *भुवनहिताचार्य उ०विनयप्रभ मेरुनन्दन,जिनराजसूरि, जिनभद्रसूरि उ०जय-सागर नयकुजर, कीर्त्तिरत्नसूरि आदि, १६ वीं में क्षेमराज शिवसुन्दर साधु-सोम, गजसार आदि, १७ वीं में जिनचन्द्रसूरि उ० समयराज, सूरचन्द्र पद्म-राज, उ० समयसुन्दर उ०गुणविनय सहजकीर्त्ति श्रीवल्लभ आदि, एवं १८ वीं में धर्मवर्द्धन, ज्ञानतिलक, लक्ष्मीवल्लभ और १६ वीं में रामविजय क्षमा-कल्याण आदि स्तोत्रकारों के स्तोत्र उपलब्ध हैं। खरतरगच्छीय स्तोत्रों की कई सुन्दर सग्रह× प्रतियें भी प्राप्त हुई हैं जिनका सग्रह ग्रन्थ प्रकाशन होना परमावश्यक है।

*—इनकी 'जिन स्तुतिः' सग्राम नामक दडकमयी वाचनाचार्य पद्मराज गणि-रचित वृत्ति के साथ मुनि विनयसागरजी ने 'स्वोपज्ञवृत्ति-सहित-भावारि-वारण पादपूर्त्ति—पार्श्वजिनस्तोत्रं एव जिनस्तुति सटीका' में प्रकाशित करदी है।

×—दो हमारे संग्रह में, २ बड़े ज्ञान भंडार में २ जेसलमेर पचायती ज्ञान-भंडार में, १ विजयधर्मसूरि ज्ञानमन्दिर आगरे मे है। जिनभद्रसूरि स्वाध्याय पुस्तिका अभी मिली नहीं, कई प्रतियें त्रुटित प्राप्त है। पाटण आदि में भी ऐसी प्रतियें अवश्य होंगी।

स्तुतिकार श्रीसुन्दर

प्रस्तुत "चतुर्विंशति जिन-स्तुति" के रचयिता कवि श्रीसुन्दरगणि सम्राट अकबर प्रतिबोधक खरतरगच्छाचार्य यु० श्रीजिनचन्द्रसूरिजी के शिष्य हर्षविमल के शिष्य थे* । हमने अपने ऐतिहासिक जैन काव्य संग्रह (पृ० ६०।६३) में इनके रचित जिनचन्द्रसूरिजी के गीतद्वय प्रकाशित किये थे, एवं अपने यु० जिनचन्द्रसूरि ग्रन्थ के पृष्ठ १७२ में आपके रचित अगडदत्त प्रवन्ध = का उल्लेख किया था। जैन धातु प्रतिमा लेख-सग्रह भा० २ ले० ३२२ में प्रकाशित सं० १६६१ के मार्गशीर्ष कृष्णा ५ के लेख को आपने लिखा था। इसी ग्रन्थ के पृष्ठ १३४ में श्रीसुन्दर रचित विमलाचल स्तवन गा० ६ (सं० १६५६ माधव सुदि २ सघ सह यु० जिनचन्द्रसूरिजी की यात्रा के उल्लेख वाला) का भी निर्देश किया गया था। हमारे संग्रह में एवं बीकानेर के अन्य भंडारों में आपके अन्य कई गीत प्राप्त होते हैं जिनकी सूचि नीचे दी जा रही है—

---

*—यद्यपि स्तुति चतुर्विंशतिका में श्रीसुन्दर के गुरु का नाम नहीं पर प्रति लेखक श्रीवल्लभ गणि १७ वीं शती के सुप्रसिद्ध खरतरगच्छीय विद्वान हैं एवं अन्य कइ बातों पर विचार करने पर हमारी राय में ये हर्षविमल के शिष्य ही सभव हैं।

सुन्दर नदी पर विचार करने पर आपकी दीक्षा स० १६३५ के लगभग सभव है और जन्म स० १६२५। इनके गुरु हर्षविमलजी का नाम सं० १६२८ के पत्र में आता है। और नंदी अनुक्रम से भी उनकी दीक्षा सं० १६१७-२० के लगभग सभव है।

=—इसकी ६ पत्रों की प्रति हमारे सग्रह में है। स० १६६६ के कार्तिक ११ शनिवार को भाणवड में शाह चापसी, पूजा, मन्त्रि रहिया सुश्रावक के आग्रह से इसकी रचना की गई है। उत्तराध्ययन सूत्र के द्रव्य भाव जागरण के अधिकार से २८५ पद्यों में यह रचना हुई है।

१-इरियावही मिच्छामि दुक्कड विचार गर्भित स्तवन गा १४ (आदि-चउवीसमा जिनराय०)
२-पार्श्व स्तवन गा० ५ (आदि-पुरसोदय प्रधान ध्यान तुमारडो०)
३-नेमी गीत गा. ६ (,,—सामलिया सुन्दर देहा०)
४ आदीश्वर गीत गा ६ (,,—नयर विनीता राजीयउजी०)
५-नेमि राजुल गीत गा ८ (,,—जोउ २ वहिनी हियड विचारी नइ०)
६-वैरागी गीत गा. ६ (,,—चेतन चेतइ जीउ चित्त मइ०)
७ दसवैकालिक गीत गा ६ (,,—चतुर्विधसघ सुणउ हितकारक०)
८-जिनचन्द्रसूरि गीत गा ५ (,,—सुणउ रे सुहागण को कहइ०)
९- ,, ,, ७ (,,—अमृत वचनपूज्य देसणा०)
१० ,, ,, ६ (,,—तुम्हारे वादिवउ मुझ मन भायउ०)
११- ,, ,, ५ (,,—श्रीखरतरगच्छ गुणनिलउ०)
१२-जिनसिंहसूरिजी गीत गा ३ (आदि-जिनसिंघसूरि जगमोहण०)
१३- ,, ,, ५ (,,—रगलागउजी मोहि जिनसिंघसूरि०)

स्तुति चतुर्विंशतिका की प्रस्तुत शैली की अन्य रचनायें

प्रस्तुत 'स्तुति चतुर्विंशतिका' यमकालंकार विभूषित विद्वत्पूर्ण कृति है, इसमें द्वितीय चरण की पुनरावृत्ति चतुर्थपाद*में भिन्नार्थ के रूप में की गई है, यमकालंकार का इसमें अखंड साम्राज्य है, एवं शार्दूल विक्रीडित-स्रग्धरा आदि १३ छंदों में×स्तुति की गई है। देववदन भाष्य के अनुसार पत्येक स्तुति

—*नं० १४-१५में प्रथम तृतीयपाद समानता रूप एव नं० २३ वी स्तुति में भिन्न प्रकार का यमकालंकार भी है।

—×शार्दूल विक्रीडित में नं० १ १२ १६ २२, उपेंद्रवज्रा २ ६, शालिनी ३, १६, द्रुत विलम्बित ४. १० १४, स्रग्विणी ५, वसततिलका ६, मालिनी ७ १७, मदाक्राता ८, हरिणी ११, पृथ्वी १३ २०, अनुष्टुब् १५, शिखरिणी १८. २१. स्रग्धरा २३. २४, वीं जिन स्तुतियें हैं। इससे स्तुतिकार का संस्कृत भाषा छंद एव अलकारों की विद्वता और

के चार पद्यों में से प्रथम में विवक्षित किसी एक तीर्थंकर की स्तुति, दूसरे में सर्वजिनों की स्तुति, तृतीय में जिनप्रवचन और चौथे में शासन सेवक देवों का स्मरण किया गया है। ऐसी यमकालंकार चतुर्विंशतिकाओं में सर्व प्रथम रचना आचार्य बप्पभट्टसूरिजी की है, इसके पश्चात शोभनमुनिजी की सर्व श्रेष्ठ होने से बहुत ही प्रसिद्ध है। इसकी प्रेरणा से रचित इनके अनतर मेरुविजयकी जिनानंदस्तुति चतुर्विंशतिका, ४-यशोविजय उपाध्याय की ऐन्द्र-स्तुति चतुर्विंशतिका ५-हेमविजय रचित (अप्रकाशित) और एक अज्ञात कर्तृक (दिशसुख मरिवल-आदिपद वाली तीर्थंकरो की ही प्राप्त) प्रकाशित है। अभी तक यमकालकार ९६ पद्य वाली ५ रचनायें ही ज्ञात थी * प्रस्तुत कृति के प्रकाशन द्वारा इसकी सख्या में अभिवृद्धि होती है। स्तुतिकार ने स्वोपज्ञ वृत्ति द्वारा भावों को स्पष्ट कर दिया है। इसकी एक मात्र प्रति=**मुनि-विनयसागरजी** को प्राप्त हुइ थी अत इसके प्रकाशन के लिये मुनि श्री को धन्यवाद देते हुवे भूमिका समाप्त की जाती है।

अगरचन्द नाहटा

आषाढ़ पूर्णिमा -२००४

बीकानेर

उस पर अधिकार असाधारण सिद्ध होता है।

*—पद्य २७ से ३६ की अन्य यमकालंकारमयी स्तुति चतुर्विंशतिकाओं के लिये देखें ऐन्द्र स्तुति की प्रस्तावना।

=—प्रति के लेखक श्रीवल्लभ स्वयं बडे विद्वान ग्रन्थकार थे, आपकी अर-नाथ स्तुति भी विद्वतापूर्ण कृति है, जिसके प्रकाशन का भी मुनि विनयसागरजी विचार कर रहे हैं। श्रीवल्लभ के अन्य ग्रंथो के सबध में जैन सत्यप्रकाश वर्ष ७ अक ५ में प्रकाशित मेरा लेख देखना चाहिये।

शुद्धाशुद्धिपत्रकम् ।

अशुद्धि	शुद्धिः	पृष्ठ	पंक्ति
क्रमा	क्रमा	१	११
सद्धीकरोऽमोदितो	सद्धीकराऽऽमोदितो	१	१७
घियो	घिय	२	१०
ऽया	अया	२	२६
जितोरुदिश	जितोरुदिश	३	१६
यच्छ्रन्	यच्छ्रद्	४	१३
दे वीतारा हार सारा धिका रा	दे वीताराऽऽहारसाराऽधिकाऽऽस	४	१५
आसा	आशा	४	१७
इह	इह	५	११
जिवरान्	जिनवरान्	५	१२
सुमत्पाह्व	सुमत्याह्व	६	१०
इदाना	ददाना	७	२
नुतास्ता	नुताऽस्ता	७	२२
संया	साया	८	६
दिनछिन	दितोछिन्नो	२३	१५
रोगसमः	रोगशम	२३	१७
धरतीत	वरतीति	२३	२३
सौरभी	सैरिभी	२४	१५
यन्	यत्	२५	६
कारमाका	का रमा काः	२५	७
उपात्यच्यां	त्रपा ताच्या	२६	५
दानेभ्योहिता निकामं	दानेभ्यो हिताऽनिकामं	२७	१५
परिभवंतु	परिभवं तु	२८	५

अशुद्धि	शुद्धिः	पृष्ठ	पंक्ति
वलम्	मलम्	२८	८
यन्ति	यान्ति	२८	२१
दमितामानमला	दमिता मानमायामला	२६	२
मकलं	मकरं	२६	१३
वर तास्का	कर तारक	३०	४
सनरस्तेन	समरसस्तेन	३३	१५
राता	राताभावा	३३	२३
नु काम	तु कामं	३५	२

ॐ अर्हं नमः ।

महाकवि पंडित श्रीसुन्दर-गणि-प्रणीता-
स्वोपज्ञ-वृत्त्या च सुशोभिता-

श्रीचतुर्विंशतिजिन स्तुतिः ।

श्री युगादिदेव स्तुतिः ।

(शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम्)

नित्यानन्दमयं स्तुवे तमनघं श्रीनाभिसूनुं जिनं,
विश्वेशं कलयामलं पर-महं मोदात्तमस्तापदम् ।
नित्यं सुन्दर भाव भावितधियो ध्यायन्ति यं योगिनो,
विश्वेऽशंकलयामलं परमहं मोदात्त-मस्तापदम् ॥ १ ॥

ते यच्छन्तु जिनेश्वराः शिवसुखं त्रैलोक्यवंद्यक्रमां,
ये भव्यक्रमहारिणोऽसमयशोभावर्द्धनाः कामदाः ।
तन्वाना नवमङ्गलान्य-नवमाः श्रीसंघलोके सदा-
ये भव्यक्रमहारिणोऽसमयशो भा वर्द्धनाः कामदाः ॥ २ ॥

श्रीसार्व्वप्रभवा भवस्य विभवद्भावारिभेदे भृशं,
गी-र्वाणप्रखराऽसतां प्रतनुतामत्यन्तकामासुहृत् ।
पापव्यापहरा धुताऽधिनिकरा संद्धीकराऽमोदितो—
द्गीर्वाणप्रखरा सतां प्रतनुतामत्यन्तकाऽमासुहृत् ॥ ३ ॥

देयाच्छं श्रुतदेवता भगवती सा हंसयानासना,

नालीकालयशालिनीतिकलि तापाऽयाऽपहारक्षमा ।
धत्ते पुस्तक-मुत्तमं निजकरे या गौरदेहा सदा,
नाऽलीकालयशालिनी तिऽकलितापायापहारक्षमा ॥ ४ ॥

व्याख्या—अर्हं त नाभिसूनुं जिनं स्तुवे । किंभूतं ? नित्यो य आनन्द-स्तन्मय अनघं-पापहीनं विश्वेशं-विश्वस्वामिनं कलं-यामं-यमसमूहं लाति ददातीति, तं रा ला दाने । परं-प्रकृष्टं मोदात्-हर्षात् । पुन किंभूत ? तमस्तापद-तमस पापस्य ताप ददातीति त । त क ? यत्तदोर्नित्य सम्बन्धः, विश्वे सर्व्वेयोगिनो, यं नित्यं ध्यायन्ति । किंभूतं ? अशक्लयामलं-अशक -शकारहितो यो लयो ध्यानविशेषस्तेनामलं-निर्मलं । परा प्रकृष्टा महायस्मात्तं । मया श्रिया उदात्तं अस्तापद-अस्ता आपदो येन तं । किंभूताः ? सुन्दरभावभावितधियो—सुन्दर भावेन भाविता धीर्येषा ते ॥ १ ॥

ते जिनेश्वरा शिवसुख यच्छन्तु-दिशतु । त्रैलोक्येन वद्याः क्रमा येषा ते । ते के ? ये भव्यक्रमहारिणो-भव्याचारमनोज्ञा । यशश्च भा च यशोमे असमे च ते यशो मे च असमयशोभे ते वर्द्धयन्तीति । कामदाः-वाञ्छितदा । पुन किंभूता ? श्रीसघलोके-मंगलानि तन्वाना । किंभूता ? पतनरहिता । किंभू-ते ? सदाये सत् प्रधान आयो-लाभो यस्य तस्मिन् । किंभूता ? भव्यक्रमहारिणो भविना अक्रमं अनाचारं हरन्तीति । पुन किंभूता ? असमयशोभावर्द्धना -परमतशोभाच्छेदका -कन्दर्प्पच्छेदका ॥ २ ॥

गीर्व्वाणी सता-भवस्य प्रतनुता-कृशत्व प्रतनुता विस्तारयतु । किंभूता ? भावारिभेदे-भाववैरिविनाशे वाणप्रखरा-वाणातीक्ष्णा । अत्यन्तकामक-अत्यन्तका-माना असुहृन्-अमित्ररूपा । आमोदितोद्गीर्व्वाणप्रखरा-आमोदितोद्गीर्वाणा चासौप्रखरा-प्रकर्षेण खं सुख राति-दत्ते इति । 'खमिंद्रियस्वर्गेशून्नम्' इत्येकाक्ष-राभिधानात् । पुनः किंभूता ? असता अत्यन्तका-अतिक्रान्तयमा अमासुहृत् रोगप्राणहारिणी ॥ ३ ॥

सा श्रुतदेवता श देयात् सदासना । किंभूता ? नालीकालयशालिनी-नालीक कमलं तस्याऽऽलयेन शोभमाना । पुन. किंभूता ? ईर्ति कलि तापऽया-

अश्री·, तेषा मपहारे क्षमा समर्था । सदाना–दानसहिता । पुन किंभूता ? अलीकालयशा–अलीक-असत्य अलयोऽपध्यान श्यति-छिनत्ति । नीत्या कलिता । अपायापहा–विघ्नहर्त्री अर अत्यर्थ क्षमा यस्या । "नानुस्वरविसर्गौ तु, चित्रभंगायसमतौ ॥ ४ ॥

श्री अजितजिन स्तुतिः ।

(उपेन्द्रवज्रावृत्तम्)

जिताऽरिजातं नमतां हरन्तं, स्मराऽजितं मानव मोहरागम् ।
जयत्यलं यो यशसो-ज्वलेन, स्मराऽजितं माऽनवमो हरागं ।
जिना जयं ते त्रिजगन्नमस्या, दिशन्तु मे शंसितपुण्यभेदाः ।
यद्वाग् विधत्तेऽत्र नरं जितोरू, दिशं तु मेशं सितपुण्यभे-दाः ।
जिनागमानन्दितसत्त्व स त्वं, दिशाऽनि शं कल्पित कंदलालम् ।
कृपालता येन कृता त्वयाऽम-दिशाऽनिशं कल्पितकंदलाऽम्
पविं दधानाच्छविभाविताशं, साऽमानसी मा भवता-त्तताशा ।
या स्तूयतेऽलं सुदृशा विशा सत्, सा मानसीमाऽभवतात्तताशा ।

व्याख्या—हे मानव ! अजित जिनं स्मर । मोहराग हरन्त, जितारे सुतं स्मरेण अजित स्वयशसा हराग कैलास जयति । किभूतः ? मानवम मया श्रियाऽनवमो रम्य ॥ १ ॥

ते जिना जय दिशतु । मे मह्यं शंसिता कथिता पुण्यभेदायैस्ते । यद्वाग् येषा वाणी नरं, मेश-लक्ष्मीश विधत्ते । तु पुनः जितोरुदिश विधत्ते जिता ऊर्व्यो दिशो येन त । किभूता वाग् सितपुण्यभा–सिता उज्वला पुण्या पवित्रा भा यस्याः । किभूता ? ईदा – श्रीदा ॥ २ ॥

हे जिनागम ! स त्व मे-मह्यं श सुखं दिश देहि । किंभूत आनि न विद्यते इ कामो यत्र तत् । कल्पित छेदितः कंदलस्य कलहस्य आल उपक्रमो येन तत् । येन त्वया कृपालताऽलं भृश कल्पितकदला निर्मितकदाकृता । किंभूतेन

आप्तदिशा आप्ता दिशो येन सर्व्वदिक् ख्यातत्वात् ॥ ३ ॥

सा मानसी मा अवतात् रक्षतु, किंभूता तताशा विस्तीर्णवांछा या सुदृशा विशा सम्यग्दृशा मानवेन स्तूयते । कीदृशेन अमवता ज्ञानवता, किंभूता सत्सा प्रधानश्री । मानसीमा अह कृतेः सीमा मर्यादा । पुन किंभूता आत्तताशा-आत्ता गृहीता ता यैस्ते आत्तता शत्रवस्तान् अश्नाति भक्षयति या ॥४॥

श्री संभवजिन स्तुतिः ।

(शालिनी वृत्तम्)

वन्दे देवं संभवं भावतस्तं, सेनाजातं योजिताशं सदालम् ।
बाह्याबाह्यं विद्विपां चाजयद्धे, सेनाजातं यो जिताशं सदालं ।
सल्लोकं तेऽवंतु तत्वेऽतिसत्त्वाः, सर्वज्ञा-लीनं-दिताशाविचित्राः
स्तौत्यानंदाद्यानमानप्रमाणान्, सर्वज्ञालीनंदिताशाविचित्राः
सद्यो-वद्यं हंतु हृद्यार्थ सार्थः, सिद्धान्तोयं सज्जनानामपारः ।
वुद्धिं यच्छन् कुडूमलध्वंसने सत्, सिद्धांतोयं सज्जनानामपा-रः
दद्यान्मोदं श्रृंखला वज्रपूर्व्वा, देवी तारा हार सारा-धिकारा ।
पद्मे वासं संदधाना सदानं, दे-वीतारा हारसारा धिका रा ॥४॥

व्याख्या—सेनादेवी सुत सभव अह वन्दे । किंभूत योजिताशं योजिता आसायेन त, सदाऽल सदुपक्रम यो भगवान् वाह्यं चाऽतरग सेनाजात सैन्यवृन्द अजयत् । जिताश सदा अल भृशम् ॥ १ ॥

ते सर्व्वज्ञा सल्लोक अवतु । किंभूत लोक तत्त्वे लीन अतिसत्वा वहु-साहसा दिताशाः छिन्नतृष्णाः पचवर्णा । ते के-यान सर्वज्ञाली सर्व्वविद्वत् श्रेणी स्तौति । किंभूता नंदिताशा हर्पितदिक् । किंभूत विशिष्टं विज्ञानं त्रायंते इति विचित्राः ॥ २ ॥

अय सिद्धान्तः सज्जनाना अवद्य पाप हन्तु । मनोज्ञार्थसमूहः न विद्यते

पारो यस्य सः । किकुर्वन् सिद्धा प्रसिद्धा बुद्धि यच्छन् । किंभूतं क्रोधमलध्वंसने-तोयं नीर । किभूत सज्जाश्च ते नानामाश्च रोगाः ते सज्जनानामास्तेभ्यः पा रक्षा राति ददातीति सज्जनानामपार ॥ ३ ॥

वज्रशृंखला मोदं दद्यात् । तारा उज्वला हारेण सारोऽधिकारो यस्याः सा हारसाराधिकारा । किभूता पद्मे वास सदधाना । किभूते सदानदे सत् प्रधान आनन्दो यत्र तस्मिन् । वीतारा गतवैरिव्रजा आहारश्च सा च आहारसे । ते च राति ददाति या । अधिका उत्कृष्टा आरा दीप्ति र्यस्या सा ॥ ४ ॥

श्री अभिनन्दनजिन स्तुतिः ।

(द्रुतविलंबितछन्दः)

तमभिनन्दनमानमतामलं, विशदसंवरजं तुदितापदम् ।
य इह धर्म्मविधिं विभुरभ्यधा-द्विशदसंवर-जंतु-दितापदम् ।१।
जिवरान्नवराग निवारकान्, नमततानवभावलयानरम् ।
श्रितशिवं रचयंति हि ये द्रुतं, नमतता नवभावलया-नरम् ।२।
शममयः समयो विलसन्नयो, भवतुदे वनरोचित सत्पदः ।
तव जिनेश कुवादि मदापहो, भवतु देवनरोचितसत्पदः ॥३॥
सशरचापकरा किल रोहिणी, जयति जातमहा भयहारिणि ।
गवि गता सततं विगलन्मनो-ज यति जात महामय हारिणी ४

व्याख्या—तं अभिनन्दन आनम । विशदश्चासौ सवरो नृपस्तस्माज्जात । तुदिता व्यथिता आपदो येन त । विशत् असवराणा जन्तूना दितानि खडितानि अपदानि उत्सूत्राणि येन त ॥ १ ॥

तान् जिनवरान् नमत । किभूतान् अवभावलयान् अवभावे रक्षाभावे लयो येषा ते तान् । अर भृश ये जिना नरं श्रितशिव रचयन्ति । किंभूताः—नमतता नमता न वल्लभा ता श्री येषा ते सारंभत्वात् । नवभावलया नवं भाव-लय भामंडल येषा ते ॥ २ ॥

हे जिनेश ! तव समभो भनतुदे, ससार स्फेटनाय भवतु । किंभूतः देवनरयोः उचितानि शक्र चक्रित्त्वादीनि सति प्रधानानि पदानि यत्र सः । पुन. किंभूत अवनरोचित-सत्पद.—अवनेन रत्तया रोचितानि शोभितानि संति, विद्य-मानानि पदानि यत्र स' ॥ ३ ॥

जाता महा यस्याः सा जातमहा, अभयदानेन शोभमाना, पुन. किंभूता विगलन् मनोजः कामो येषा ते विगलन्मनोजाः विगलन्मनोजाश्च ते यतयश्च विगलन्मनोजयतयस्तेषा जातः समूहस्तस्य महाभयं हरतीति ॥ ४ ॥

श्रीसुमतिजिन स्तुतिः ।

(स्रग्विणी छन्दः)

श्रीसुमत्पादमीशं प्रभूतश्रियं,
तं स्मरामो हितं मानसेऽनारतम् ।
यं नमस्यन्ति देवाः शिवाहर्विभा-
तं स्मरामोहितं मानसेनारतम् ॥ १ ॥

सार्व्ववारं चिरं ध्यायतोऽध्यानहं,
मानवा धामलं सज्जयामोदितम् ।
यं जुषंते हरंतं सतां योगिनो,
मानबाधामलं सज्जयामो दितम् ॥ २ ॥

सिद्धविद्याधरैः संस्तुतः सोस्तु नः
श्रीकृतांतोऽभवायाऽमहाविक्रमः ।
यः प्रदत्ते सतामीहितं नाशिता,
श्रीकृतांतो भवायामहा विक्रमः ॥ ३ ॥

दुष्टरक्ष क्षमा संदधाना गदां,

सास्तु काली वराया-मरालीकला ।
भाति यत्कीर्त्ति रुच्चैर्ददाना समाः,
सा-स्तु कालीवरायामरालीकला ॥ ४ ॥

त सुमति वयं अनारतं निरन्तर मानसे चित्ते स्मरामः । किंभूतं स्मरेण अमोहितं । पुनः किंभूत कल्याणदिनप्रभात मानस्य सेनाया अरत अनासक्तं ॥१॥

हे मानवा ! सार्व्ववार सर्वज्ञसमूह ध्यायत । किंभूतं धामं तेजो लाति ददातीति तं । किंभूत -सज्जयेन प्रधानजयेन आमोदितं हर्षितं । किंभूतं सता मानबाधामलं हरंत । सजयामोदितं सज्जे यामे व्रतसमूहे उदितं उदयं प्राप्तम् २

स श्रीकृतातः सिद्धान्तः अभवाय मोक्षायास्तु । नोऽस्माकं किंभूत आ सामस्त्येन महान् विक्रमो यस्य सः । पुनः किंभूतः नाशितौ अश्रीकृतातौ दारिद्रययमौ येन स । भवस्य आयामं विस्तार हन्तीति । पुन किंभूतः विक्रम-विशिष्टः क्रमः आचारो यस्य सः ॥ ३ ॥

सा काली देवता वराय अस्तु भूयात् । किंभूता अमराली कला अमराल्याः देवश्रेणेः कं सुखं लाति ददातीति । यत्कीर्त्तिर्यस्या कीर्त्ति र्भाति । किंभूता समाः समस्ताः साः श्रियो ददाना । वर आयो लाभो यस्याः सा वराया । पुनः किंभूता कालीवरईश्वरः आ सामस्त्येन या लक्ष्मीः मराली राजहंसी तद्वन् मनोहरा ॥ ४ ॥

श्री पद्मप्रभजिन स्तुतिः ।

(वसंततिलका छन्दः)

पाद्मप्रभी भवतु मूर्तिरियं मुदे मे,
या पद्मरागविभया रुचिरा-जितेना ।
श्रेयांसि या च तनुते विनता-नुता स्तां,
यापद्मरा गविभयारुचिराऽजितेना ॥ १ ॥
सा जैनपद्धति-रनुद्धत बुद्धिरस्तात्,

कालं कलंकविकला मुदितप्रभावा ।
या संस्तुता सुखचयं तनुते च दीर्घ-
कालं कलं कविकला मुदितप्रभावा ॥ २ ॥
श्रीमज्जिनेश ! शिवदा गदितार्थसार्था,
गौ रातु शं सितमहा भवतोऽसमोहा ।
प्रोत्तारयेच्छ्रितजनानिह यानवद्या,
गौरा तु शंसित महाभवतोऽसमोहा ॥ ३ ॥
गांधारि पातु भवती नवती रिताका,
सं-या महारि हरिणी नयनादरामा ।
पाण्योः सुवज्रमुशले दधती द्विरूपे,
सायाम हारिहरिणी नयना-दरा-मा ॥ ४ ॥

व्याख्या—पद्मराग विभया पद्मराग कान्त्या रुचिरा । अतएव जितेना जितसूर्यारिक्तत्वात् सा मूर्तिः श्रेयांसि तनुते । विनता प्रणता नुता स्तुता च सती । किंभूता अस्तायापद्मरा अया अश्रीः आपत् कष्ट मरो मरण एतानि अस्तानि निरस्तानि यया सा । अस्तायापद्मरा अजिता अपराभूता इना स्वामिनी ॥ १ ॥

सा जैनपद्धतिः जिनश्रेणिः काल अस्यात् क्षिपतु । किंभूता अनुद्धता बुद्धिर्यस्याः सा । किंभूता कलंकरहिता पुनः किंभूता हर्षितातिशया या स्तुता । सुखसमूह विस्तारयतीति । दीर्घकाल मोक्षलक्षण च । अपर कविकला तनुते । कल मनोज्ञ उदयवर्ती प्रभा अवतीति उदित प्रभावा ॥ २ ॥

हे जिनेश ! भवतस्तव गौर्वाणी शं सुख रातु ददातु । किंभूता सित-महा सिता उज्वला महा उत्सवाः यस्याः सा । किंभूता असमोहा नमसोहा असमोहा हेशंसित ! हे स्तुत ! या गौः महाभवतः महासंसारात श्रितजनान प्रोत्तारयेत् यानवत् पोतवत । गौरा उज्वला । किंभूता असमोहा असमा ऊहा वितर्का यस्याः

सा ॥ ३ ॥

हे गांधारि ! सा भवनी पातु । इनवती स्वामिवती । ईरित कंपितं अर्कं-दु ख यया सा । किंभूता महारिहरिणी महत अरीन् हरतीति । पुनः किंभूता नयनादरामा न्यायशब्दमनोहरा । किंभूता मायामहारिहरिणीनयना सह आयामेन वर्त्तेते ये , ते सायामे , मायामे च ते हारिणी च मायामहारिणी हरिणी नयने इव नयने यस्याः सा । अदरा भयरहिता । मा मा कर्म्मतापन्नम् ॥ ४॥

श्री सुपार्श्वजिन स्तुतिः ।

(मालिनी छन्दः)

हरतु दुरितहन्ता श्रीसुपार्श्वः स पापं,
शमयति मम तापं कार्यमालाभहृद्यः ।
इह महदविनाशं यस्य भक्त्या जनो वै,
शमयति ममतापकाऽऽर्यमाऽऽलाभहृद्यः ॥ १ ॥

जयति जिनवरालीसामलालातिकाला,
जनयति कृतकामा यामदाना गतारा ।
कृतकलिमलनाशं संस्मृता या विशां आक्,
जनयति कृतकाऽमायामदा नागतारा ॥ २ ॥

निहत सकलतन्द्रं श्रीजिनेन्द्रागमं भो!,
मह तमिह तमोदं सुप्रभावंचिताभम् ।
परम वरवचोभिर्नित्यशो दुर्जनाना-
महत-मिहतमोदं सुप्रभावं चितापम् ॥ ३ ॥

दिशतु सुखमुदारं श्रीमहामानसी ! मे,
पर-मतिशयसाराऽसारदानाऽसमाना ।

रुचिररुचिभृताशा पाणिना शं दधाना,
पर-मतिशयसारा सारदाना समाना ॥ ४ ॥

व्याख्या-स श्रीसुपार्श्व पापं हरतु । मम यः तापं शमयति । किं लक्षणं कार्यमालामहत्य कार्यं च मा च कार्यमे तयोर्लाभेन हृत्य यस्य भक्त्या जन श सुखं श्रयति गच्छति । किंभूतं ममतापकार्यमा ममतापंके तृष्णा कर्दमेऽर्यमा सूर्य. अलाभं हानिं हरतीति ॥ १ ॥

अमलआल उद्यमो यस्याः सा । जनाना यतीना च कृत कामोऽभिलाषो यया सा । यामदाना यामस्य व्रतसमूहस्य दानं यस्या. सा । गतारागतं आर अरिवृन्द यस्या सा । सा का यो विशा मानवाना कृतकलिमलनाश जनयति रचयति स्तुता । किंभूता कृतकामायामदा कृतकाश्च ते अमाश्च कृतकामास्तेषा आयामं-विस्तार यति खण्डयति या सा । पुनः किंभूता नागतारा पद्मवत्तारा उज्वला नाग. । सर्पेगजेपद्मे चेत्यनेकार्थः ॥ २ ॥

भो भव्य ! इह त श्रीजिनेन्द्रागमं मह पूजय । कीदृश तमोद पापच्छेदक सुप्रभावचितामं सुप्रभया सुकान्त्या, वञ्चिता अमा रोगा येन त । दुर्जनाना पर भवरवचोभि । अहत अक्षतं इहतमोदं एः कामस्य हतो मोदो येन स त । सुष्ठु-प्रभावं चिताम चितं स्फीत अम ज्ञान यत्र तं ॥ ३ ॥

श्री महामानसी ! मे मह्य पर प्रकृष्ट सुखं दिशतु । कीदृशी अतिशयसारा अतिशयेन साः श्री. राति दत्ते या सा । आसारदाना आसारो वेगवान् वर्षं तद्दान यस्या. सा । असमाना गुरुतरा परौ च तौ मतिशयौ च परमतिशयौ ताभ्या सारा रुचिरा । सारदाना सारदाया: आना प्राणरूपा सखीत्वात् समाना साहंकारा ॥ ४ ॥

श्री चन्द्रप्रभजिन स्तुतिः ।

(मन्दाक्रान्ता छन्दः)

देवं चन्द्रप्रभजिन-मिमं चन्द्रगौरांगभासं,
वन्दे मायासह-मह-महो ! राजिताशं तमीशम् ।

कीर्त्या योऽलं जयति जगदानंदकंदोभवेऽत्रा-
मन्देऽमायासहमहमहोराजिताशं तमीशम् ॥१॥
सार्व्वव्यूहो वितरतु परं त्रिश्वविश्वप्रशस्यः,
शं वो भव्या! लयदमकरो दक्षमालोपकारी।
कामारिं यो हृतमद-मलं भाववैर्यद्रिभेदे-
शंबोभव्यालयद-मकरो-दक्षमालोपकारी ॥ २ ॥
श्रीसिद्धान्तो धृतघनरसः सिन्धुवत्पूरिताशः,
स्तादस्ताघः सुरचितमहा जीवनोदी नतारः।
योऽर्थं श्रुते किल बहु महावी यथाढ्यं तथाथ-
स्ता-दस्ताघः सुरचितमहाजीवनोदीनतारः॥३॥
पायाद्दिव्यांकुशपविधरा सिन्धुरारूढदेहा,
सायाऽलीलामुदितहृदयानीतिमत्तापराशा।
वज्रांकुश्याश्रितसुखकरा हेमगौरास्तविघ्ना,
सा यालीलामुदितहृदयानीतिमत्तापराशा ॥४॥

व्याख्या—अहो! इति सम्बोधने। अहं तं देवं चन्द्रप्रभं मन्दे स्तुवे। किंभूतं मायासह राजिताशं रेण कामेनाऽजिता आशा वाञ्छा यस्य तं। तं ईशं यः कीर्त्यातिमीश। चन्द्र जयति। भवे अमन्दे प्रचुरे। किं लक्षण अमायासहमहमहोराजिताश अमो-रोगः आयास-खेद तौ हन्तीति-अमयासहा महा उत्सवा महस्तेजस्ताभ्या राजिता आशा दिशो येन स। पश्चात् कर्मधारय ॥१॥

हे भव्या! सार्वव्यूहो जिनगणो वो युष्मभ्यं शं वितरतु। किंलक्षणः लयदमकर लयश्च दमश्च तौ करोतीति। दक्षमालाया विद्वच्छ्रेण्या उपकारी यः। कामारिं कामवैरिणं हृतमदं अकरोत्। भाववैरिण एवाद्रयस्तेषां भेदे शबः पवि। पुनः किंभूतः अक्षमालोपकारी अक्षमा लोपकर्ता। अभव्य आलय नरकाद्य ददा-

श्री शीतलजिन स्तुतिः ।

(द्रुतविलंबितं छन्दः)

स्मरत शीतल-मीशमिहैनमा-
मजयदं चितमोद-मपालयम् ।
स्मररिपुं किल यो निलयो त्रिदा-
मजयदंञ्चितमोऽदमपालयम् ॥ १ ॥

विरचयंतु जयं मम कर्म्मणां,
जिनवरा-गतमोहरणा घनाः ।
सुजन कानन पल्लवने परा-
जि-नवराग तमो हरणा घनाः ॥ २ ॥

तव जिनेश ! मतं विगतैनसां,
समयते हृदयं गमकामितम् ।
निहत संतमसं वितरत् सतां,
समय ते हृदयंगम ! कामितम् ॥ ३ ॥

विजयते सततं भुवि मानवी,
प्रवरदा नवमानवराऽजिता ।
जिन पदांबुरुहे भ्रमरीस्तमा,
प्रवर-दानव-मानव-राजिता ॥ ४ ॥

व्याख्या—शीतल ईश स्मरत । किलक्षणा एनसा पापाना अजयदं चितमोद व्याप्तमोद अपालय अपगतः अलयो स्थान यस्य । यः स्मररिपुं कन्दर्प अजयत् जिगाय । किंलक्षणः यः अचितम अचिता पूजिता मा लक्ष्मीर्यस्य । किंलक्षणा स्मररिपु अदमपालय अदमपा अविरता त एव आलयो य-

म सं ॥ १ ॥

जिनवरा ! मम कर्मणा जय विरचयन्तु । घनमोहरणा गतो मोह रणो येषा ते । घना निश्चलाः परश्चासौ आजि पराजिः पराजिश्च नवरागश्च तमश्च पराजिनवरागतमामि, तानि ह्रियते यैस्ते । घना मेघाः ॥ २ ॥

हे जिनेश ! तव मत विगतेनमा गतपापानां हृदयं समत्रते प्राप्नोति । गमकामित । हे हृदयगम ! सता कामित वाञ्छित वितरत् ददत् ॥ ३ ॥

मानवी भुवि विजयते । किलक्षणा प्रवरदा प्रकृष्ट वरं ददातीति । नवमामवरा नवेन मानेन वरा प्रधाना । अनिता प्रवरा ये दानव- मानवाः तयो मध्ये विशेषेण गजिता ॥ ४ ॥

श्री श्रेयांसजिन स्तुतिः ।

(हरिणी छन्दः)

अतिशयवरं श्रीश्रेयांसं जिनं वृजिनापहं,
अमितममलं भा-मा-गेहं महामि तमंचितम् ।
यमिहमुदिता ध्यायंतीन्द्रादयोऽपि दिवानिशं,
अमित-ममलंभामागेहं महामित-मंचितम् ॥१॥
जिनगणमिमं वन्दे भक्त्या गुणैः प्रवरैरलं-
कृत-मह-मपायासं सज्जातमोद-मदारुणम् ।
चरणमचरत्तीव्रं योत्र स्तुतो जगदीश्वरैः,
कृतमह-मपायासं सज्जातमो दम दारुणम् ॥२॥
जिनमत-मदो वन्दे यच्छत् सदाच्छविराजितं,
विदितकमनं ताभोगं वारिताशमरीतिदम् ।
वितरति पदं सद्भ्यो यद्वै सुरासुर संस्तुतं,
विदितक-मनन्ताऽभोगं वाऽरिताश-मरीतिदम्

(शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम्)

श्रीमच्छ्रीवसुपूज्यराजतनय श्रीवासुपूज्य प्रभो ! ,
न त्वा केवलिनं सदार्यमसमं भव्या महं पावनम् ।
विश्वाधीश लभन्ति नोच्चपतमं देवावली सेवितं ,
नत्वा-के वलिनं सदार्यमसमं भव्यामहं पावनम् ॥ १ ॥

अर्हन्तोद्भुत बोधिबीजजलदा देयासुरुच्चैः समे ,
ते तत्त्वानि भृतप्रभावनिकरा विज्ञातमोदानि मे ।
ये विश्वे सुविधीन् ययुः शिवपदं स्वाज्ञारमासम्भिशा-
ते तत्त्वा निभृतप्रभावनिकरा विज्ञातमोदानि मे ॥ २ ॥

वाणी ते जिननाथ ! कल्मषहरा देयादमंदा-मुदं ,
सद्योगांगदकामला भवपरा भूतिप्रदाऽनाविला ।
या तापं प्रणिहन्ति संतत महोदत्तेसतां निर्वृत्तिं ,
सद्योगांऽगद कामलाऽभवपरा भूतिप्रदानाऽविला ॥ ३ ॥

देवी शान्तिकृदस्तु सा सुरनरैर्या स्तूयते नित्यशः,
श्रीशान्ति वैरलासनाऽमरहिता वित्रासितााराऽजरा ।
पाणौ राजति कुण्डिकामृतभृता यस्याः परा निर्मिता-
श्री शान्ति वैरला सनाऽमरहिता वित्रा-सिता-राजरा ॥४॥

व्याख्या—हे श्रीवासुपूज्य ! के नरा पावन पवित्रं महं-उत्सवं न लभन्ति किन्तु सर्व्वेऽपि । त्वा-त्वा नत्वा प्रणम्य केवलिन सदार्यमसमं सदा अर्यम्णा सूर्येण समं-तुल्यं भव्यामह भविनां आमान्-रोगान् हन्तीति । पावनं पाया रक्षाया वनं उद्यानं बलिनं बलसहितं सता आर्यं स्वामिनम् ॥ १ ॥

ते इमे समे सर्व्वेऽर्हन्तो मे-महयं तत्त्वानि देयासुः । किंलक्षणाः भृतप्रभावनिकरा -भृतप्रभावसमूहा । किंलक्षणानि तत्त्वानि विज्ञातमोदानि-विज्ञातो मे

मानन्दो यैस्तानि ये विघ्ने -सुविधीन् श्रीभनाचारान्, तत्त्वा विस्तार्य शिवपदं ययुः, स्वाजारमाया. सविश्रान्ते-सद्गृहे निमूलप्रभापनिचराः निर्मला निश्चला प्रभा क्षान्तिर्यस्यामवर्णा धारायां तस्या कं मुक्तं गतिं ददति ,ये ते मुक्तिमुखप्रदा इति भावः। विज्ञातमोदान विघ्नेभ्योऽतमं पुण्य ददति ये ते तान ॥ २ ॥

हे जिननाथ ! ते तव वाणी मुद देयात् । सद्यस्तत्कालं गांगश्वा्लसा गंगाया इदं गांगं स्वच्छं नीरं तद्वदमला भवपराभूतिप्रदा भवस्य पराभूतिं-पराभवं प्रदाति छिनत्ति । अनाविला शुद्धा महा प्रधानो योग मद्योग तस्यांगानि सा-खायामादीनि ददातीति, तस्य सम्बोधनम् । कामसा कामं लुनातीति । अभव-दरा मोक्षपरा, भूतिप्रदाना भूते प्रदान यस्या सा । अमिला न विद्यते विलं भ-रक यस्या सा ॥ ३ ॥

वरला हंसी आसनं यस्या सा । अमरहिता रोगरहिता विघ्नानितारा विशालित आरं अरिसमूहो यया सा । अजरा निर्मिता श्री शान्तिः निर्मिताकृता श्रियाः अलक्ष्म्याः शान्ति यया सा । वरला वरं लाति-ददाति या सा । सदा-सना अमरहिता अमरेभ्यो हिता विज्ञा विद्ज्ञानं त्रायते या सा विज्ञा । सिता उज्ज्वला राजरा राजाचन्द्रस्तद्वत् रा दीप्ति र्यस्या ॥ ४ ॥

श्रीविमल-जिन-स्तुतिः ।

(पृथ्वी छन्दः)

जगज्जनितमंगलं कलितकीर्तिकोलाहलं,
नमामि विमलं हितं दलितविग्रहं भावतः।
सुखानि वितरत्यलं चरणपंकजं यस्य मत्,
नमामि विमलं हितं दलितविग्रहं मायतः ॥ १ ॥

जिना जनितविस्मया जगति विस्फुरत्कीर्त्तिभि—
र्जयंति कलमापलाः शमनदीनतादायिनः ।
यदंघ्रिवरसेवया सुखयशांसि भव्या जनेऽ—
र्जयन्ति कलमामलाः शमनदीनथादा यिनः ॥ २ ॥

मतं जिनवरोदितं जयति विस्फुरद् वादिसत्,
सभाऽजित-मलंघनं परमतापहं यामरम् ।
मनोभिलषितां ददत्परसुरासुरैर्भक्तितः,
सभाजित-मलं घनं परमतापहं यामरम् ॥ ३ ॥

शरासनवरासिभृज्जयति जात-मोदा सदा,
पराऽपरहिताऽऽयता सुरवराजिता रोहिणी ।
विशुद्धसुरभी-महो ! सुरुचिराक्षमालाधरा-
पराऽपरहिताऽऽयता सुरवराजितारोहिणी ॥ ४ ॥

व्याख्या—अर्हं त विमल नवानि स्तवीमि । दलितविग्रह विकसितश-
रीर भावतः शुभभावात् यस्य चरणपंकजे सुखानि नवानि वितरति वस्तं । की-
दृश दलितो विग्रहः सङ्ग्रामो येन तत् । कीदृशस्य यस्य भावतः कान्तिमत ॥ १

जिना जयन्ति । किलक्षणाः कलमामला कला रम्या मा श्रिय मलते धार-
यन्तीति । शमनदीनतादायिन. शमनस्य यमस्य दीनता ददनीत्येवंशीला. । भव्या
यत्पादसेवया सुखयशांसि अर्जयन्ति । कलमामला. कलम् शालिस्तद्वदमला
शमनदीनतादा शमस्य नदीनता समुद्रत्वं ददतीति नदीनामिन नदीनस्तस्य
भाव । यिन या श्री विद्यते येषा ते यिनः ॥ २ ॥

मतं जिनोक्तं जयति । वादिसत्सभाजितं वादिना सत्सभयाऽजितं अल-
घनं लघयितुमशक्य परमतापह परमं तापं हन्तीति तं । याम व्रतसमूह रातीति
तं । मनोभीष्टा या लक्ष्मीं सभाजित पूजित अल भृश घन परमतापह परमतं
अपहन्तीति । या श्रिय अर अत्यर्थं ददत् ॥ ३ ॥

रोहिणी जयति । परा प्रकृष्टा अमरहिता रोगरहिता आयता विस्तीर्णा
सुरनराजिता-सुरवरैरजिता विशुद्धसुरभीं धेनु आरोहिणी । अपरा न विद्यन्ते
परे-शत्रवो यस्याः सा । अमरहिता देवेभ्यो हिता आयता, सुरवराजिता आयो
लाभस्तां श्रीः असवः प्राणा रवः शब्दस्तैः राजिता ॥ ४ ॥

श्रीअनन्त-जिन-स्तुतिः ।

(द्रुतविलंबित छन्दः)

अतनुतापद-मेन-मदारुणं,
जिनमनन्त-मनन्तगुणं श्रये ।
अतनुता-पदमेन मदारुणं,
य इह-मोह-महो ! विभुरस्मयम् ॥ १ ॥

अशमिनो मतिदानरमाभृतः,
अपयता-ज्जिनराजगणः स नः ।
अशमिनोऽमतिदानरमाभृतः,
समजयद्य इहात्मरिपून् क्षणात् ॥ २ ॥

अकृतकं दलिताहितसम्पदं,
जिनवरागम-मेन-मुपास्महे ।
अकृत कं दलिताऽऽहितसंपदं,
य इह वादिगणं न मदोज्झितम् ॥ ३ ॥

समरसादितदानवतानवाऽ-
वतु नतान् धृतदीप्तिरिहाच्युता ।
समरसाऽदितदा नवताऽनवा,
सदसि चापकरा हयगामिनी ॥ ४ ॥

व्याख्या—एनं अनन्त जिनं अहं श्रये सेवे । किंलक्षणं अतनुतापद अ-नतोः कामस्य तापं ददातीति तं । अदारुणं अरौद्रं सौम्यं एनं क ? यो विभुर्मोह । अहो ! इति आश्चर्ये अस्मयं निरहंकारं अतनुत अकृत, किंलक्षणं अपदमेनम-दारुणं अपगतो दमो यस्मात् सः अपदमः तस्य इन स्वामी । मदेन अरुणः मदारुणः अपदमेनश्चासौ मदारुणश्च त ॥ १ ॥

स जिनराजगण नोऽस्माकं अशं असुखं शमयतात् । इनः स्वामी किंलक्षणः मतिदानरमाभृत. मतिश्च दानं च रमा च ता बिभर्तीति । भृत शब्द स्वरान्तो व्यजनान्तश्च । य इह आत्मरिपून् अन्तरद्विष समजयत् जिगाय । किंलक्षणान् अशमिन अशमो वियते अशमिनः तान् अमतिदान् । पुनः किंलक्षणान अरमाभृतः अरमा बिभ्रतीति अरमाभृतः तान् ॥ २ ॥

वयं एनं जिनवरागमं उपास्महे सेवामहे । कीदृश अकृतक नकृतक शाश्वतं दलिताहितसपदं दलिता खंडिताऽहिताना वैरिणा सपद, श्रियो येन तं । यो जिनागमः कं वादिगण मदवर्ज्जित मदरहितं न अकृत न चकार अपितु सर्व्वमपि । कीदृशं तं दलिताहितसपद दलिता विकसिता आहिता निश्चला सपदः पद विशेषा यत्र त ॥ ३ ॥

अच्युता अच्छुप्तादेवी नतान् अवतु । किंलक्षणा समरसादितदानवतानवामरेसादितं खेदितं दानवाना तानवन्तयो भावो यया सा । समरसा सम मर्शको रसो यस्याः सा । अदितता अदिता अखण्डिता ता श्री यस्याः सा । अनवा पुराणा ॥ ४ ॥

श्रीधर्म्म-जिन-स्तुतिः ।

(अनुष्टुब् छन्दः)

भवतेऽकलितापाय, श्रीधर्म्म ! नमतीह यः ।
भवतेऽकलितापाय ! स नरः पदमव्ययम् ॥ १ ॥
नयेहन्त-मुदारामं, जिनस्तोमं स्मृतिं सदा ।
नयेहन्त मुदारासं, रतः शिश्राय यः शिवम् ॥ २ ॥
भविकन्दर्पहन्तारं, श्रये सिद्धान्त-मेतकम् ।
भविकं दर्प्पहन्तारं, लभन्ते यजुषो द्विषाम् ॥ ३ ॥
पशाभूतिकराऽरीणां, प्रज्ञसी पातु नः समा ।
पशाभूति-करारीणां, दधानाऽसि लतां करे ॥ ४ ॥

व्याख्या—हे श्रीधर्म ! यो नरः प्रवृते तुभ्य नमति इह । किंलक्षणाय अकलिताय कलिश्च तापश्च तौ न विद्यते यस्य स अकलिताप. तस्मै । हे अकलि-ताप ! हे गतविघ्न ! स नरः अव्यय पद मवते प्राप्नोति ॥ १ ॥

उदाराम उदारज्ञान यो मोक्ष आश्रितवान् । न्यायस्थितः सुदागम हर्षे-ण गामं रम्य ॥ २ ॥

भविना कन्दर्प हन्तार सिद्धान्त धत्ते । यत्तुपो भवका भविके कल्याण लभन्ते । हिमा स्वर्णहं, तारं उज्वल ॥३ ॥

अरीणा पराभूतिं करोतीति । अरीणा अर्चाणा आसत्तना दधाना नि-भाणा ॥ ४ ॥

श्री शान्ति-जिन-स्तुतिः ।

(शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम्)

विश्वाधीश्वर विश्वसेनतनय स्तुत्वा भवन्तं न के,
शान्ते ! नोदितमार ! तारकलया धाराजनामोदकम् ।
सौख्यं के परमं लभन्ति न बुधाः कामाग्निशान्तौ सदा,
शान्तेनोदितमार ! तारक ! लयाधाराज ! नामोदकम् ॥१॥

अर्हन्तो ददता-ममन्द-मसमानन्दाः सदानन्दनाः;
मोदंते जनितानवप्रशमनादा नाम लाभावराः ।
नुत्वा यानिह कामितासि यशतो विद्वज्जना निर्भरं,
मोदन्ते जनितानव प्रशमना दानामलाभावराः ॥ २ ॥

जीयाज्जन्तुहितं करैं जिनवरै-रुक्तौगणेशै धृतः,
सिद्धान्तो दितभावरोगविसरो जन्मप्रभारामकः ।
शुद्धादि विविधार्थ सार्थ रुचिरो सद्वादिदर्पापहः,
सिद्धान्तोऽदितभाववरो गयि सरोजन्मप्रभारापकः ॥ ३ ॥

दण्डच्छत्रधरोऽवतात् स-भवतः श्रीब्रह्मशान्तिः सतां,
मूर्द्धन्यो वरदामराजितकरो राजावली शोभितः ।
या जीयन्त इहापरैर्नवितरे तुष्टः परायः श्रियो,
मूर्द्धन्यो वरदाऽमराजित करो राजा बलीशोऽमितः ॥ ४ ॥

व्याख्या—हे शान्ते ! हे नोदितमार ! के के बुधा परमं सौख्यं न न जभन्ति ? अपितु सर्व्वे । भवतं स्तुत्वा, कीदृश तारनतया रम्यकलया, धारा-जनामोदकं-धारा क्षोणी तस्या जनान् आमोदयतीति । पुनः कीदृशं कामाभि-शान्ती नाम इति सत्ये, उदकं नीरं हे शान्तेन । शान्तानां मुनीनां इन स्वा-मिन् ! हे उदितमार ! उदिता मा श्रिय राति ददातीति । हे तारक ! हे लया-भार ! हे अज ! जन्मरहित ॥ १ ॥

ते अर्हन्तो जिना मोदं ददता कीदृशा जनितानवप्रशमनादाः जनित अनव प्रशमस्य नादो यैस्ते नाम । लाभावरा लाभश्च अवश्च तौ राति ददति ये । मोदन्ते-हर्षन्ते । जनितानवप्रशमनाः जनिर्जन्म तानवं कृशत्व ते प्रशमयन्ति इति । दानामलाभावरा-दानेन अमला भयावराः प्रधाना ॥ २ ॥

सिद्धान्तो जीयात् । कीदृशः दितभावरोगविसर दितश्छिन्नो भावरो-गविसर, समूहो येन सः । पुनः कीदृश जन्मप्रभारामक जन्मना प्रभारः समूहः तत्र अमक रोगममः अदितभावरः अदिता अखण्डिता या भा कान्तिः तयावरः, गवि पृथिव्या सरोजन्मप्रभारामक सरोजन्म कमल तस्य प्रभावत् रामको रम्य निर्मला आदि यस्य नानार्थसमूहरम्यः परवादिमद स्फेटकः निष्पक्षः अन्तो यस्य ॥ ३ ॥

सतां मूर्द्धन्यो मुकुट वरेणदाम्ना राजितो करो यस्य सः । 'यक्ष पुण्य-जनो राजा' इत्यभिधानत । राजावली—यक्षश्रेणिः तया शोभित दण्डच्छत्रे वर-तीत्य स । तुष्ट, इह अमूः श्रियो वितरेत् दत्त । कीदृशः वरदश्चासौ अम-रैरजितः अमराजितश्च करमुख्य रानि ददाति सः । पश्चात्कर्मधारयः । राजा यक्षाधिप बलीश बलिना प्रभु अमित सामस्त्येन ॥ ४ ॥

श्रीकुन्थु-जिन-स्तुतिः ।

(मालिनी छन्दः)

प्रणमत भवभीतिच्छेदकं कुन्थु-माभा,
जिन-मिन-मितमानं सावधानं दधानम् ।
सुरनरनुतपादं विघ्नदैत्य प्रणाशे,
जिन-मिनमितमानं सावधाऽऽनंदधानम् ॥ १ ॥

जिननिचयमुदारं नौमितं प्राप्तपारं,
त्रिशदशम-मपारं मंदमालोपयुक्तम् ।
वचनमिह यदीयं संयमं राति सङ्ख्योऽ—
त्रिशदशम-मपारंमं दमालोपयुक्तम् ॥ २ ॥

वितरतु मतिभारं मेति-सारं जिनानां,
मतमसमऽलयाऽलंकार-मायामतारम् ।
हरति यदिह वेगाद्राति नोवाश्रितानाम्—
मतमसमऽलयालं कारमा यापतारम् ॥ ३ ॥

द्युति-तति निभृताशा सौरभी वाहनं या,
कलयति नरदत्ता शासिता-राति-जाता ।
भवतु मम मुदे मा सर्व्वदोदारदेहा,
कलयति-नर-दत्ताशाऽसि ताराऽतिजाता ॥४॥

व्याख्या—हे जनाः ! कुन्थुं जिन प्रणमत । इनं इनमानं गताहंकार साव-धान अप्रमत्तं आभाः कान्ती दधानं जिन नारायण अतरायदैत्यनाशे इनमित-मानं ए, कामस्य नमित मानं प्रमाण येन स न । पुनः किंलक्षणं सावधानद-धानं सह अवधेन अहिंसालक्षणेन वर्तते इति सावधः आनन्दस्य धानं पश्चात्

कर्मधारयः ॥ १ ॥

निर्म्मलशम अपारं गतवैरिसमृद्ध भंवमालोपयुक्तं कल्याणमालासहितं । कीदृशं सयम अविशत अशमं अपारंभं गतारंभं दमालोपयुक्तं दमस्य अलोपेन युक्तं ॥ २ ॥

जिनाना मतं कर्तृ । कीदृशं अममो लयोऽलंकारो भूषणं यस्य तत् । आयामेन तारं उज्ज्वलं यत् मतं आश्रिताना अलयालं अपथ्यानोद्यमं हरसि । कारमाका श्रियो न राति न दत्त किन्तु सर्व्वा अपि । यामतारं यामता यम-समृद्धता राति दत्ते तत् ॥ ३ ॥

सा नरदत्तादेवी मम मुदे भवतु । शिक्षित-वैरिवर्गा या महिषीवाहन-मंगीकरोति । कलयनीना नराणा दत्ताशा । असिना तारा उज्ज्वला अतिजाता कुलीना ॥ ४ ॥

श्री अर जिन स्तुतिः ।

(शिखरिणी छन्दः)

सदारं तीर्थेशं तमिह तमसा-मुत्तमतमं,
महामो हन्तारं निदलित-कला-केलिम-कलम् ।
निहत्योच्चैर्ज्ञानं विशद ममजायावलमहो !,
महा-मोहन्तारं विदलितकलाकेलि मकलम् ॥ १ ॥
जिनानं-धाम स्तान् विशदमभजन् ध्यानमिह ये,
सदाहंसारामं कृत-कमल-मानन्दितरसम् ।
जहू राज्यं प्राज्यं सुरनरधृताज्ञों च सहसा
सदाहं साऽरामं कृतकमलमानन्दितरसम् ॥ २ ॥
जिनोक्तं व्यक्तं श्री निचितमनयापोहनिपुणं,
मतं पाता-द्रव्यान-रम-मलमानन्द्रमवरम् ।

प्रदत्ते यत्सद्भ्यः पर-मदहरं हृद्यमनसा,
मतं पाताद्भव्यानरममलमानन्द्रमवरम् ॥ ३ ॥
सुखं दद्यात् सा मे विशदमिह चक्रायुधधरा-
सुरीत्यक्ताऽश्री-शाकृतिसुरचिताऽरातिविभया ।
उपात्यश्र्याऽऽरूढा नभसि शशिनो या प्रवरया,
सुरीत्यक्ता श्रीरा कृतिसुरचिता राति त्रिभया ॥४॥

व्याख्या—नित्यं अरं जिनं महामः पूजयाम । तमसा हन्तारं विदलित कन्दर्प्पं । अकलं कलयितुमशक्यं । कीदृशं विदलिता विकशित कलाया केति येन तं अकद्धं मदरहित । कड्कमदे ॥ १ ॥

हंसस्य परमात्मन आरामं कृतं कमलानां आधारादीना मानं यत्र तत् । राज्यं सारामं श्रीरम्य कृतकं अलं आनन्दितरसम् ॥ २ ॥

भव्यान् पातात् पतनात् रक्षतु । अरं अमलमान भव्यानर भविना आनान् प्राणान् राति दत्ते यत् । यत् आनन्दं प्रदत्ते । मतं रक्षाप्रद अमलं आमान् रोगान् लातीति ॥ ३ ॥

चक्रायुधधरा चक्रेश्वरी सुरि मे सुख्य दद्यात् । कीदृक् त्यक्ताऽश्रीः त्यक्ताऽलक्ष्मीः आकृतिसुरचिता—अराति विभया,आकृत्या सुरचित निर्णाटिसं अरातीनां वैरिणां विशिष्ट भय यया सा । या प्रवरया विभया कान्त्या शशिनश्चन्द्रस्य त्रपां राति दत्ते । कीदृक् सुरी त्यक्ता सुयुक्तिमहिता श्रीरा लक्ष्मीप्रदा कृतिसुरचिता कृतिभिः सुरैश्चिता व्याप्ता ॥ ४ ॥

श्रीमल्लि-जिन-स्तुतिः ।

(शालिनी छन्दः)

श्रीमल्लिमीडे कलनीलकायं, त्रिभामयं योग त्रिभासमानम् ।
निराकरोन्मोहबलं क्षणेन, त्रिभामयं यो गवि माऽसमानम् ॥ १ ॥
जयन्ति ते ध्वस्ततमोविकारा, निरा-जिना-मोदितमानतारा: ।

यजन्ति यानत्र नरामरेशा, विराजिनानोदितमानतारा: ॥२॥
जिनेश ! वाक् ते अरनीत्यमे-या,न्देयादमंदानि हितानि कामम् ।
विस्तारयन्ती ददती च विद्या, देया दमन्दानिहितानिकामम् । ३
यक्षाधिप: पातु सहस्तियानो, विभातिरामोऽहितकृत्सुराव: ।
श्रीसंघ रक्षा करणोद्यतो यो, विभाति रामो हितकृत्सुराव: ॥४॥

व्याख्या—श्रीमल्लि इति स्तुवे । विभामयं कान्तिमयं योगेन विभासमानं यो मोहबलं निराकरोत्, विभामयं विशेषेण भामस्य कामस्य या श्री येन । गांवि पृथिव्या भया रुचाऽममानम् ॥ १ ॥

ते जिना जयन्ति । कीदृशाः विराः विशिष्टा रा श्रीसि येषां ते । नोदितमानताराः नोदितः स्फेटितो मानो यैस्ते, नोदितमानाश्च ते ताराश्च नोदितमानताराः यान् नरामरेशा यजन्ति । कीदृशाः विराजिनानोदितमाः विराजिनी नानाप्रकारा उदिता मा येषां ते विराजिनानोदितमाः । पुनः किंलक्षणाः नताराः नतं आरं येभ्यस्ते नताराः ॥ २ ॥

हे जिनेश ! ते तव वाक् हितानि देयात् । अरनीत्या मातुमशक्या । अमंदानि गुरूणि कामं भृशं । कीदृशी दमं विस्तारयन्ती । दानिहिता दानिभ्योहिता निकामं ददती । आनिना प्राणिनां कामं वाञ्छितं ददती ॥ ३ ॥

स यक्षाधिपः पातु । किंलक्षणः विभातिरामः विभया कान्त्या अतिरामः श्यामः "स्याद्रामः श्यामलः श्यामः" । अहितकृत् रिपुच्छेदकः सुरावः शोभनशब्दः सः कः यो विभाति शोभते रामो रम्यः हितकृत् सुराव सुरान् अवतीति सुराव ॥ ४ ॥

श्रीमुनिसुव्रत-जिन-स्तुतिः ।

(पृथ्वी छन्द)

नमामि मुनिसुव्रतं जिनमिनं नुतं वित्तमै-
जेरामरणभेदिनं शमितमानबाधामदम् ।

स्मरन्ति जनपावनं भुवननायकं यं हि दु-
जेरामरणभेदिनं शमितमा नवा-धामदम् ॥ १ ॥
जना निजमनो-हि ये जिनपती-नरं निर्म्मलान्,
नयन्ति सुकृताद्रान् विशदकेवलश्रीवरान् ।
भवे परिभवंतु वै विभवदायकाम्नायकान्,
न यन्ति सुकृताऽदरान् विशदके वलश्रीवरान् ॥२॥
जिनेन जननापहं जनित संवर श्रीवरं,
कृतं विकृतिनाशनं दमितमानमायाबलम् ।
मतं वितरदुच्चकैः सह धनेन माभा-च्यलं,
कृतं विकृतिनाऽशनंदमितमानमायामलम् ॥ ३ ॥
स्फुरत्कमलराजिता रचयताच्च गौरी शिवं,
विभूत्तमसमानता सुमतिभूरिताऽराऽदरा ।
करोति हितमत्र या प्रवरगोधिकावाहना,
विभूतमसमाऽनताऽसुमति भूरितारादरा ॥ ४ ॥

व्याख्या—अहं मुनिसुव्रतं नमामि । कीदृशं जरामरणभेदिनं शमितमा-नवाधामद-मानश्च बाधा च मदश्च मानबाधामदाः शमिता मानबाधामदा येन त । तं क ? शमितमा साधवो य स्मरन्ति । कीदृशाः ? नवाः नवीनाः कीदृशं वामव तेजोदायकं पुनः कीदृशं दुर्ज्जरामरणभेदिनं दुर्ज्जरो योऽमोरोग. रणः मश्राम तद्रूपे मे नक्षत्रे दिन दिवसरूप ॥ १ ॥

ये जनाः जिनपतीन् निजमनो नयन्ति । कीदृशान सुकृताद्रान् पुण्या-दरान् विशदाया. केवलश्रियो वरान, ते जना भवे ससारे परिभव न यान्ति न प्राप्नुवन्ति । कीदृशान् सुकृतो निष्पादितोऽदरो मोक्षो यैस्ते तान । कीदृशे भवे विशदके विशत् अकं दुःख यत्र । वल च श्रीश्च ताभ्यां वरान रम्यान् ॥ २ ॥

हे दमितम ! माधो ! मत आनम । कीदृशं जिनेनकृतं विकृतिनाशनं विकारहरं दमितामानमला येन तत् । धनेन सह अदानं वितरत् । कीदृशेन विकृतिना विशेषेण कृतिना कीदृशं आयामलं आयेन लाभेनाऽमल ॥ ३ ॥

गौरी शिवं रचयतात् । कीदृशी विभूत्तमसमानता विभूत्तमा राजानस्तै नेता । सुमतिभूः इमारा इन गतं आर यस्या , अदगा यौऽसुमति प्राणिनि हितं करोति । कीदृग् विभूत्तमसमा विशिष्टं यत भूत्तमं स्वर्णं तत् समा । अनता भूरितारावरा भूरि स्वर्णो तारे रूप्ये च आदरो यस्या सा ॥ ४ ॥

श्रीनमि-जिन-स्तुतिः ।

(शिखरिणी वृत्तम्)

नमिं नाथं नानाभयशमयहरं विश्वविदुरं,
सुदारं वन्देऽहं शमदमकरं तारकमलम् ।
नमन्तीन्द्राः सर्व्वे यमिह सुख हे शुंशुभ ! इशा-
सुदारं वन्देहं शमद-मकलं तारकमलम् ॥ १

जिनव्यूहं वीहंलमिह तत मोहापहमहं,
अयेऽसंसारेशं सदमरहितं कामदमरम् ।
भविभ्यो यो वृत्ते गुरुतरमहो ! सर्व्वविपदा-
अये संसारेशं सदमरहितं कामदमरम् ॥ २ ॥

सुखं दिश्याद्वाणी तव जिनपते ! धौतकलुषा,
क्षमासाराऽकाराऽस्वरकरसमानो-न्नतिकरा ।
तमस्तोमध्वंसे जन-मनज-बोधेव (सु ?) गुरुणा,
क्षमासाराकारा स्वरकरसमानोन्नतिकरा ॥ ३ ।

क्रियात् काली साऽलं कमलनिलया लाभमतुलं,
सुधामाधारा भाजितपरगदा राजितरणा ।

घनश्यामा-यामा वय-चय इभ दारितदरा,
सुधामाधारा भाजितपरगदा राजितरणा ॥ ४ ॥

व्याख्या—अहं नमिनाथं मन्दे स्तुवे । मुदा हर्षेण अरं भृशं शमदम-वरतारकं अलं भृशं, कीदृशं उदारमन्देहं मन्दा ईहा यस्य तं । शमदं शर्म ददातीति । अवरक्षाप्रदं तारकमलं तारा कमला श्री र्यस्य तं ॥ १ ॥

अहं जिनव्यूहं श्रये भजे । कीदृशं असमारेशं असमारो मोक्षस्तस्य नाथ । मत अमरहितं प्रधानदेवानां हितं, कामदमरं कामस्य शर्मं राति ददा-नीति तं । यः ससारेशं दत्ते । कीदृशं मदमररहितं सतो विद्यमाना ये असारो-गास्ते रहितं कामदं अरं ॥ २ ॥

हे जिनपते ! ते तव वाणी सुखं दिश्यात् । कीदृशी-क्षमासारा अकारा न विद्यते कारा गुप्तिगृहं यस्याः सा । अम्बरकरश्चन्द्रस्तत्समाना उन्नतिकरा उ-त्प्राबल्येन नतिकरा, तमस्तोमध्वंसखरकरसमा-सूर्यसमा आनानां प्राणानां उ-न्नति कं च सुखं राति दत्ते या सा ॥ ३ ॥

काली लाभं क्रियात् । कीदृशी सुधामाधारा सुधा अमृतं मा श्रीः तयो धारा भूमिः । कीदृशी भाजितपरगदा भया कान्त्या-जिता परा प्रकृष्टा गदा रो-गा यया सा । राजितरणा राजितसंग्रामा सुधामाधारा सुधाम शोभनं तेजस्तस्य आधारा, भाजितपरगदा भाजिता परा गदा आयुधविशेषो यस्याः । राजि-तरणा रो दीप्रः अजितश्च रणः शब्दो यस्याः ॥ ४ ॥

श्री नेमि-जिन-स्तुतिः ।

(शार्दूलविक्रीडितं वृत्तम्)

श्रीनेमिं तमहं महामि महसा राजीमतीं श्रीयुता,
तरयाजो-र्जितकामरामवपुषं यो गीतरागादराम् ।
मेजे मुक्तिवधूं चयैः कृतनुतिः संख्यावतामलं,
तरया-ऽजोऽर्जितकामरामवपुषं योगीतरागाऽदराम् ॥ १ ॥

नित्यं भक्ति जुषे जिनव्रज ! महानन्दं तमात्मालयं,
मह्यं देहि विभोदितं वितमसं सारं समस्ताधिकम् ।
भीति यत्र न जन्ममृत्युजनिता योगीश्वरैः सर्वदा
मह्यं देहिविभो !ऽदितं वितमसंसारं समस्ताधिकम् ॥२॥
प्राणीत्राणपरायणा जिनपते ! ते भारती पातकं,
धीराऽवद्यतु देव ! मे नवरसाऽपारा गमाराजिता ।
तापं हन्ति सुधेव या हृतमला भव्यांगनाम्नुल्लसद् ,
धीराऽवद्यतु देव मेन ! वरसापा रागमाराजिता ॥ ३ ॥
यामा कुंदफलावली श्रितकरा सिंहासनाध्यासिनी,
विश्वांबाऽवरताऽऽप्रमादपरमालीना सुतारोचिता ।
विघ्नव्रातहराऽस्तु सा निजगुण श्रेणीभृत-प्रोल्लसद्-
विश्वाम्भा वरताप्रपादपरमाऽऽलीना सुतारो-चिता॥४॥

व्याख्या—य राजीमर्ती तत्याज । कीदृशीं ऊर्जितकामरामवपुष ऊर्जित कामेन रामं वपु यस्या स्ता । गीतरागादरा गीतो प्रसिद्धो रागादरो यस्यास्ता । राजी० । क्लिलक्षणा मुक्तिं इतरागादरा गतरागाचासौ अदरा च निर्भया ता याद्यानां तत्या कृतनुतिः अज जन्मरहित , कीदृशीं मुक्तिवधूं अर्जितका-मरा अर्जितका चासौ अमरा च मरणरहिता तां अवपुषं अव तेज पुष्णा ति या ता योगी० ॥१॥

हे जिनव्रज ! मह्य मे त महानन्द देहि । आत्मालय आत्मनः स्थान कीदृशं विभोदित विभया-उदित, वितमसं निष्पापं, सारं समस्ताधिक महयं पूज्य हे देहिविभो ! देहिना स्वामिन ! अदित अखण्डित वित विशिष्टो यत्र त । असंसार न विद्यते ससारो यत्र तं । समस्ताधिक नम्यत्र अस्तो निराकृत आधि यत्र त ॥ २ ॥

हे जिनपते ! ते तव भारती पातकं अवद्यतु । हे देव ! मे मम नवरसा

अपारा पाररहिता, गमाराजिता गमैः आराजिता शोभिता या तापं हन्ति । कीदृशी धीरा धीप्रदा अवद्यतुन , पापछेदिनी हे मेन ! मा श्रीः तस्या इनः स्वामी, वरसापा वरा मा श्रिय पाति या सा । रागमाराजिता रागमाराभ्या अजिता ॥ ३

माच अविका विघ्नघातहराऽस्तु । कीदृशी विश्वाम्बा विश्वमाता अवरता रक्षापरा आम्रपादपरमालीना आम्रवृक्षरमायालीना सुतारोचिता सुताभ्या आरोचिता निजगुण भूतः विश्वा पृथ्वी वरनाम्रपादपरमा वरौ ताम्रौ यौ पादौ ताभ्यां परमा आलीना आलीना सखीना, स्वामिनी सुतारा उज्ज्वला रुचिता ॥ ४ ॥

श्रीपार्श्व-जिन-स्तुतिः ।

(स्रग्धरा छन्दः)

विद्याविद्याऽनवद्यः कमनकमनताऽभंगदोऽभंगदोःश्रीः,
कालोऽकालोपकारी करण करणता मोदितामोदिताऽग्रम् ।
दिश्यादिश्यासकीर्त्ति र्विभवविभवकृत् निर्ममोऽनिर्ममोक्ष-
श्रेयः श्रेयः सपार्श्वः परमपरमताऽऽभोगहा मोगहारी ॥१॥
व्यूहो व्यूहो जिनाना-मुदितमुदितधीभावरोऽभावरोगोऽ-
पायात् पायात्सनामाऽकलितकलितमाः कामदोऽकामदोषः ।
सद्योऽसद्योगहृद्योऽसमरसमरमाऽऽनन्दनो नन्दनोऽकः ।
पुण्योपुण्यो नितांतं जनितजनिततेः कल्पनोऽकल्पनोऽलम् ।२।
सत्या सत्याऽऽरहीनाऽजननजननता सर्व्वदा सर्व्वदाचः,
मारा माराऽऽसवाणी सुरव सुरवराऽऽनन्दिनी नन्दिनीव ।
भव्या भव्याप्तभावाऽनिपुणनिपुणताकृत्तग कृत्तराणा,
कामं कामं प्रदेयादमित दमितमाऽसातदा सा तदात्री ॥३॥
चित्ता चित्तानि-दत्तेऽसुमतिसुमतिदाराञ्चिताऽऽराञ्चितारा

साया मा या विमाया सुकृतसुकृतधीराजिनी राजिनीत्या ।
पातात् पाताद्वरेण्याऽशरणशरणकृद्दानवीदानवीरोत्,
पद्मा पद्मावती नो निभृतनिभृतताऽहीनमाऽहीनभार्या ॥४॥

व्याख्या—विद्या विद्याविदो ज्ञानस्य या विद्या ताभ्या अनवद्यः कमनः कामस्तस्य कमनता-रमणीयता तस्या-भंगदः, अभगदो श्रीः-असगबाहु लक्ष्मी-काल कृष्णवर्णः अकालोपकारी-अकं दुःख तस्य आ सामस्त्येन लोपकारी। पुनः कीदृशः करण-चारित्रं तस्य करणता-कर्त्तृत्व तया मोदिन । मोदिनः-मया श्रिया उदितः अरसपार्श्व श्रेयो मोक्ष दिश्यात्। उरु श्रेयः गुरुकल्याण विभव-, विभवकृत विभवो मोक्षस्तस्य विभवं करोतीति । निर्म्ममो नि स्पृह कीदृशः अनिः निःकाम मम प्रष्ठयन्त । परम प्रकृष्टं यत परमतं तस्य आभोग विस्तारं हन्तीति भोगहारी सर्प्पशरीरशोभितः ॥ १ ॥

जिनाना व्यूह सनाशश्वत् मा-मा अपायात् विघ्नात् पायात् । कीदृश व्यूहः विशिष्टऊहो यस्य सः । उदितमुदितधीभावरः अभावरोगः भावरोगरहितः, अकलितकलितमा -अकलित कलेस्तमो येन मः । कामदः अकामदोषः सद्यस्तत्काले असद्योगहृत्, कीदृशः असमरो यः । नमररतेन आनन्दन, नन्दनोत्कः नन्दनं तत्वचिन्तनं तत्र उत्कः-उत्कंठितः, पुण्योपुण्यः पुण्यस्य ऊः रक्षा तया पुण्य पवित्रः, जनितजनिततेः कल्पनः-छेदक, अकल्पनः-कल्पना रहित, अलं भृशं ॥ २ ॥

आप्तवाणी वो युष्मभ्य कामं भृश काम-वाञ्छित प्रदेयात् । कीदृशी सत्या सती प्रधाना आरहीना अजननजननता-अजनना-जन्मरहिता ये जनाः अर्थाच्चरमशरीरिणस्तैं नेता सर्व्वदा-सदा । सर्व्वदा सर्व्वदात्री । सारा-तत्वरूपा सारा-साश्रिय राति दत्त या सा । सुरवा शोभनशब्दा ये सुरवरा-इन्द्रास्तान् आनन्दयतीति । केव ? नन्दिनीव कामदुघेव भव्याभव्याप्तभावा-भविभि ससारिभिराप्ता यस्याः सा, अनिपुणनिपुणताकृत्तरा-अनिपुणाना निपुणताकृत्तरा निपुणताकर्त्री कृत्तरागा-

क्त छिन्नो रागो यया । अमितदमितमासातदा-अमिता ये दमितमाः मानवस्ते-षाममातं दुःखं द्यति-खण्डयति या सा तदात्री ॥ ३ ॥

सा पद्मावती नोऽस्मान् पातात् पतनात् रक्षतु । सा का या आराधिता सेविता सती वित्तानि दत्ते । कीदृग् वित्ता-प्रसिद्धा आराधितारा-आरम्याऽरिगमनूरस्य आविता-रानि दत्ते या सा । अमृमति-प्राणिनि सुमतिर्दा साया-मलाभा विमाया सुकृतसुकृतधीराजिनी-सुष्ठुकृता सुकृतधीः पुण्यबुद्धि यया सा । ईराजिनीत्या-राजिनी-ईः-श्रीस्तया राजिनी या नीतिस्तया राजिनी, अशरणशरणकृत्-दान-वस्येयं दानवी दाने-वीरा, उत्पद्मा उत्कृष्टा पद्मा-श्री यस्या सा । निभृता-भृता निभृतता-निश्चलता यया सा । अहीनभा-अहीना भा यस्या । अहीनो धरणा-स्तस्य भार्या एवंविधा ॥ ४ ॥

श्रीवीर-जिन-स्तुतिः ।

(स्रग्धरा छन्दः)

वीरस्वामिन् ! भवन्तं कृतसुकृततर्ति हेमगौरांगभासं,
ये मंदन्ते समानदितभविकमलं नाथ ! सिद्धार्थजातम् ।
संसारे दुःखमस्मिन् जितरिपुनिकरा संश्रयन्ते घनापा-
येऽमन्दं ते समानं दितभविकम-लं नाथ सिद्धार्थजातम् ॥१॥
ते जैनेन्द्रा वितन्द्रा विहितशुभशता भूतये सन्तु नित्यं,
पादा वित्तारमादा नरकविकलताहारिणो रीतिमन्तः ।
ये ख्याता भ्रंशयन्ती हितसुखकरणा भक्तिभाजां स्फुरत्सत्-
पादा वित्ता रमादा नर कवि कलता हारिणोऽरीतिमन्तः ॥२॥
पाप-व्यापं हरन्ती प्रकटितसुकृतानेकभावा च सा भू-
चक्रे या मोहहृद्याऽऽचितमतिरुचिताऽनंतगौराऽनुकापम् ।

हत्वा क्रोधादि चौरानरिनिकरहरा मुक्तिमार्गप्रकाशं-
चक्रे या मोहहृद्याचित-मतिरुचिताऽनंतगौरातु कामम् ॥३॥
पायान्नो हंसयानामरनिकरनुता सारदा सारदाना,
पद्मालो नादरामा शुभहृदयमता राजिताक्षामदेहा ।
वीणादंडाक्षमाला कजकलितकरा सुंदराचारसारा,
पद्मालीनाऽदराऽमाशुभहृदयमतारा जिताक्षाऽमदेहा ॥ ४ ॥

व्याख्या—हे वीरस्वामिन ! ये नरा भवतं मंदंते-स्तुवन्ति । कीदृश कृतसुकृततर्ति-सुवर्णोज्ज्वलकान्ति । पुनः किलक्षण समानन्दितभविकमलं समानदिता वर्द्धिता भविना कमला श्री येन तं । हे नाथ ! सिद्धार्थजात-सिद्धार्थनृपतनय, ते नरा अस्मिन् ससारे दु खं न सश्रयन्ते । कीदृशास्ते समान यथास्यात्तथा, जितरिपुनिकरा , कीदृश अमंद, दितभविक-छिन्नकल्याणं अलं भृशं । अथ पुनः सिद्धार्थजातं-सिद्धो निष्पन्नोऽर्थजातो यस्य तं ॥ १ ॥

ते जैनेन्द्रा पादा भूतये सन्तु । कीदृशाः वित्तारमादाः-वित्ताश्च ते अरमादाश्च प्रसिद्धअलक्ष्मीछेदका नरकविकलताहारिण -नरकेषु या विकलता शून्यता ता हरन्तीति, रीतिमन्त -रीतियुक्ता , ते के ये पादा अतश्चित्ते ध्याताः सन्त अरीतिं अशर्यंति, केषा ? भक्तिभाजा । अरीणा इति प्रचुरता ता । कीदृशाः स्फुरत्सत्पादाः-सत्किरणाः, वित्तारमादाः-वित् ज्ञानं तस्य या तारा मार्श्रीः ता ददतीन्येव शीलाः । नरकविकलिताहारिण नरेषु कविषु च कलतया रम्यतया शोभमाना ॥ २ ॥

मानन्तगौ जिनवाग् काम रातु-ददातु । भूचक्रे-धरापीठे, कीदृग् या मोहहृद्या सा म ऊहाभ्या हृद्या आचितमति व्याप्तबुद्धिः उचिता-योग्या या मुक्तिमार्गप्रकाश चक्रे । मोहहृत् याचितं-प्रार्थित अतिरुचिता अनन्तगौरा-शेषवद्गौरा काम-भृश ॥ ३ ॥

सारदा नः पायात । कीदृग् पद्मालो-पद्मो मा पद्मा पद्मायाः आली-

श्रेणि र्यस्या सा । नादरामा शब्दरम्या शुभहृदयमता-शुभहृदया विद्वांसस्तेषां मता, राजिताक्षामदेहा-राजितः शोभितोऽक्षामो देहो यस्याः । पद्मालीना-पद्मे-स्थिता अदरा अमाशुभहृत् रोगाऽकल्याणहरा अयमतारा-अमरणप्रदा जिता-क्षा-जितेन्द्रिया, अमदेहा-मदरहिता ईहा यस्या. सा ॥ ४ ॥

इति श्रीसुन्दरपंडितप्रकांड श्रीसुन्दरमुनि विरचित-
श्रीमच्चतुर्विंशति-जिनाधिपति-
स्तुति वृत्तिः समाप्ता ॥

लिखिता—पं० श्रीवल्लभगणिना ॥

श्रीः ।

आलेखि-मुनि-विनयसागरेण संशोधिताश्च ।